

# अश्वगंधा उत्पादन में अपशिष्ट ऊन तकनीक

**अनिता मीना, एम.के. जाटव, आर.पी. मीना** और **मनप्रीत कौर**

"अश्वगंधा *(विथानिया सोमनीफेरा)* एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है। यह अपने तनाव-निवारक, प्रतिरक्षावर्धक और न्यूरोलॉजिकल लाभों के कारण वैश्विक स्तर पर उच्च मांग प्राप्त कर रहा है। यह फसल शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। यह फसल सूखा-सहिष्णु होती है और सीमित संसाधनों में भी अच्छी तरह पनप सकती है। वर्तमान में औषधि एवं हर्बल उद्योगों में इसकी बढ़ती मांग, वैज्ञानिक खेती तकनीकों की आवश्यकता को दर्शाती है। इसमें जल-कुशल सिंचाई प्रणाली, मृदा स्वास्थ्य सुधार एवं उच्च उत्पादक किस्मों का विकास प्रमुख हैं। विथानोलाइड्स जैसे सक्रिय यौगिकों के मानकीकरण और टिकाऊ उत्पादन हेतु जैव प्रौद्योगिकी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही, अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी का उपयोग एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह तकनीक मृदा की जलधारण क्षमता, पोषक तत्व उपलब्धता और पौध वृद्धि में सुधार कर अश्वगंधा की खेती को और अधिक टिकाऊ एवं लाभकारी बनाती है। यह तकनीक अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देती है और शुष्क क्षेत्रों में किसानों की आय तथा पर्यावरणीय संतुलन को सशक्त करती है।"

शुष्क क्षेत्रों में जल की कमी और मृदा की निम्न गुणवत्ता के कारण कृषि एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। ऐसे में जिन फसलों की कम जल में भी अच्छी उपज होती है, उनका महत्व और अधिक बढ़ जाता है। अश्वगंधा ऐसी ही एक औषधीय फसल है। यह एक कठोर झाड़ीदार पौधा है, जो उच्च तापमान, कम नमी और सीमित पोषक तत्वों के बीच भी जीवित रह सकता है। यही कारण है कि इसके प्रति किसानों की रुचि लगातार बढ़ रही है। हालांकि, उत्पादन को बढ़ाने और गुणवत्तापूर्ण जड़ों की प्राप्ति के लिए पारंपरिक खेती पद्धतियों से हटकर उन्नत कृषि तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

## लाभकारी अश्वगंधा

भारत की पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में जड़ी-बूटियों का विशेष महत्व रहा है और इन औषधीय पौधों में अश्वगंधा का प्रमुख स्थान है। यह पौधा 'भारतीय जिनसेंग' के नाम से भी जाना जाता है और सदियों से तनाव मुक्ति, रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने तथा मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने जैसे अनेक चिकित्सीय लाभों के लिए प्रयोग में लाया जाता रहा है। वर्तमान समय में जब वैश्विक स्तर पर आयुर्वेदिक एवं हर्बल उत्पादों की मांग बढ़ रही है, तब अश्वगंधा की व्यावसायिक खेती न केवल किसानों के लिए एक लाभप्रद विकल्प बनकर उभरी है, बल्कि यह पारंपरिक चिकित्सा विज्ञान को पुनर्जीवित करने का एक अवसर भी प्रदान करती है। विशेषकर भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों जैसे-राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात और आंध्र प्रदेश में अश्वगंधा का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। यहां इसकी सूखा सहिष्णु प्रकृति और न्यूनतम आदान आवश्यकता इसे एक आदर्श फसल बनाती है।

नवाचार की दिशा में अब वैज्ञानिक और किसान दोनों ही मिलकर विभिन्न तकनीकों पर कार्य कर रहे हैं। इन तकनीकों में जल-कुशल सिंचाई प्रणाली (जैसे ड्रिप और स्प्रिंक्लर), मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक पोषण, जैव कीटनाशकों का प्रयोग और रोग प्रतिरोधी किस्मों का विकास

प्रमुख हैं। इसके साथ ही एक अत्यंत नवाचारी पहल के रूप में अपशिष्ट ऊन (वूल वेस्ट) का उपयोग भी सामने आया है। यह तकनीक न केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से प्रभावी है, बल्कि यह अश्वगंधा जैसी फसलों के लिए स्थायित्व और उत्पादकता में भी सहायक सिद्ध हो रही है।

अपशिष्ट ऊन में नाइट्रोजन, कार्बन, सल्फर और अन्य पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ये धीरे-धीरे मृदा में समाहित होकर पौधों को पोषण प्रदान करते हैं। इसके अलावा, ऊन की रचना ऐसी होती है कि यह मृदा की नमी को बनाए रखने में सहायता करती है, जो शुष्क क्षेत्रों में एक अत्यंत आवश्यक गुण है। जब ऊन को मृदा में मिलाया जाता है, तो यह जलधारण क्षमता को बढ़ाता है, सूक्ष्मजीव गतिविधियों को प्रोत्साहित करता है और मृदा की संरचना को बेहतर बनाता है। परिणामस्वरूप अश्वगंधा की जड़ों का बेहतर विकास, उपज में वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार आता है। इससे किसानों की आय में भी बढ़ोतरी होती है।

वर्तमान में कई अनुसंधान संस्थान और कृषि विज्ञान केंद्र इस तकनीक का प्रयोग कर इसके दीर्घकालिक प्रभावों का अध्ययन कर रहे हैं। प्रारंभिक परिणाम यह दर्शाते हैं कि अपशिष्ट ऊन का उपयोग पारंपरिक जैविक खादों के साथ मिलाकर करने से मृदा की उर्वराशक्ति लंबे समय तक बनी रहती है और पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी सुधार होता है। इसके साथ ही, इससे अपशिष्ट प्रबंधन को भी एक नई दिशा मिलती है। इससे पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिलता है। यह दृष्टिकोण अर्थव्यवस्था की अवधारणा के अनुरूप है, जहां एक उद्योग के अपशिष्ट को दूसरे क्षेत्र के लिए संसाधन के रूप में उपयोग किया जाता है।



शुष्क क्षेत्रों में कारगर प्रणाली

## संभावनाओं से भरपूर

अश्वगंधा की खेती में ऊन अपशिष्ट का समावेश केवल एक तकनीकी नवाचार नहीं है, बल्कि यह किसानों के लिए एक सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम भी बनता है। विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए जो सीमित संसाधनों के साथ खेती करते हैं। यह तकनीक एक समाधान प्रस्तुत करती है, जो कम लागत में अधिक लाभ की संभावना प्रदान करती है। इसके अलावा, यह प्रणाली महिलाओं के लिए भी आजीविका के नए अवसर उत्पन्न करती है। ऊन अपशिष्ट को इकट्ठा करना, प्रसंस्करित करना और खेतों में समायोजित करना स्थानीय स्तर पर किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक जैवप्रौद्योगिकी और जीनोमिक्स तकनीकों की सहायता से अब अश्वगंधा के अंदर पाए जाने वाले सक्रिय यौगिकों जैसे-विथानोलाइड्स की पहचान, मानकीकरण और उत्पादन बढ़ाने पर भी कार्य हो रहा है। इससे औषधीय कंपनियां उच्च गुणवत्ता वाले कच्चे माल की प्राप्ति सुनिश्चित कर सकेंगी। किसानों को उनके उत्पाद का बेहतर मूल्य मिल सकेगा। इन पहलुओं के चलते, भारत न केवल अपने घरेलू औषधीय उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगा, बल्कि वैश्विक बाजार में भी एक प्रमुख निर्यातक के रूप में उभर सकता है।





ड्रिप सिंचाई के तहत अपशिष्ट ऊन का उपयोग

भविष्य की दृष्टि से देखें तो अश्वगंधा की खेती में नवाचार और सतत कृषि के समावेश से न केवल उत्पादन और गुणवत्ता में सुधार होगा, बल्कि यह शुष्क क्षेत्रों की पारिस्थितिकी तंत्र की बहाली में भी सहायक सिद्ध होगा। यह फसल न केवल आर्थिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह जैव विविधता संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य सुधार और जल प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में भी योगदान दे सकती है।

इस प्रकार, अश्वगंधा की खेती एक बहुस्तरीय समाधान प्रस्तुत करती है जो पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था तीनों के लिए लाभकारी है। संक्षेप में, अश्वगंधा की खेती में नवाचार की दिशा में अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी का समावेश एक महत्वपूर्ण कदम है। यह तकनीक न केवल मृदा की गुणवत्ता और फसल की उपज में सुधार करती है, बल्कि यह शुष्क क्षेत्रों में टिकाऊ कृषि की नींव को भी सुदृढ़ करती है।

## पर्यावरण अनुकूल

अश्वगंधा एक उच्च मूल्य वाली औषधीय फसल है, जो भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी विकल्प प्रस्तुत करती है। पारंपरिक ज्ञान, वैज्ञानिक नवाचार और टिकाऊ कृषि तकनीकों के समावेश से इसकी खेती को दीर्घकालिक रूप से सफल बनाया जा सकता है। 'अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी' इस दिशा में एक प्रभावी नवाचार है, जो न केवल जल संरक्षण और मृदा स्वास्थ्य सुधार में सहायक है, बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

**अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी**

जल और पोषक तत्वों की तीव्र कमी से जूझते शुष्क क्षेत्रों में, अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी एक अभिनव और टिकाऊ समाधान के रूप में उभरी है। भेड़ों से प्राप्त अनुपयोगी ऊन, जिसे पारंपरिक रूप से कृषि में उपयोग नहीं किया जाता था, अब मृदा संरक्षण, जलधारण क्षमता में सुधार करने और



उन्नत तकनीक से उत्पादित अश्वगंधा



पौध की स्वस्थ वृद्धि

पोषक तत्व आपूर्ति में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो रही है। इस तकनीक में ऊन को जैविक मल्च के रूप में उपयोग किया जाता है। यह मृदा की सतह पर एक सुरक्षात्मक परत बनाकर वाष्पीकरण को कम, नमी को संरक्षित, खरपतवार नियंत्रण और मृदा तापमान को स्थिर बनाए रखता है। इसके अतिरिक्त, ऊन में मौजूद प्राकृतिक नाइट्रोजन, सल्फर और सूक्ष्म पोषक तत्व धीरे-धीरे विघटित होकर मृदा को पोषित करते हैं। अश्वगंधा की खेती में इस तकनीक के उपयोग से कई लाभ प्राप्त होते हैं, जैसे:

- पौधों की सूखा सहनशीलता में वृद्धि
- मृदा की उर्वराशक्ति और जैविक गुणों में सुधार
- जल की खपत में 30-40 प्रतिशत तक की कमी
- जड़ विकास और कुल उपज में उल्लेखनीय वृद्धि
- उत्पादन लागत में कमी और लाभ में वृद्धि

**लाभ**

अश्वगंधा की खेती में इस प्रौद्योगिकी के सफल उपयोग से विशेष रूप से लघु और सीमांत किसानों को अत्यधिक लाभ मिल सकते हैं। इससे जहां एक ओर सीमित जल संसाधनों के बावजूद खेती करना संभव हो पाता है, वहीं दूसरी ओर उत्पादन लागत में कमी और गुणवत्तायुक्त उपज के माध्यम से बाजार मूल्य में बढ़ोतरी भी सुनिश्चित होती है। इसके अतिरिक्त, कम जोखिम और अधिक लाभ की संभावना इस तकनीक को कृषि व्यवसाय के लिए अधिक आकर्षक बनाती है।

नीति निर्माताओं के लिए यह एक सुनहरा अवसर है कि वे ऊन अपशिष्ट प्रबंधन, जैविक कृषि के विस्तार और औषधीय फसलों की सतत खेती को बढ़ावा देने के लिए सशक्त योजनाएं बनाएं। कृषि वैज्ञानिकों और अनुसंधान संस्थानों को भी चाहिए कि वे अश्वगंधा की उच्च उपज देने वाली, सूखा प्रतिरोधी किस्मों के विकास और विथानोलाइड्स जैसे सक्रिय घटकों के मानकीकरण पर कार्य करें। ■

## जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव के कारण विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में कृषि की पारंपरिक पद्धतियां अप्रभावी होती जा रही हैं। ऐसे में, पर्यावरण के अनुकूल और कम लागत वाली नवाचार तकनीकों की आवश्यकता बढ़ गई है। अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी एक ऐसी ही पद्धति है, जो आधुनिक विज्ञान और पारंपरिक ज्ञान का समन्वय करती है। यह तकनीक अपशिष्ट प्रबंधन के सिद्धांतों पर आधारित है, जो अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन देती है। ऊन जैसे जैविक अपशिष्ट का पुनः उपयोग कर पर्यावरणीय प्रदूषण को भी कम करती है। इसका प्रभाव न केवल कृषि उत्पादन पर पड़ता है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्र में लघु उद्योगों को भी बढ़ावा मिलता है। इससे किसानों को अतिरिक्त आय के साधन प्राप्त होते हैं और सतत आजीविका के मार्ग प्रशस्त होते हैं।



अपशिष्ट ऊन की मल्च